International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 30-08-2021, Accepted: 16-09-2021, Published: 30-09-2021
Volume 7, Issue 5, 2021, Page No. 55-57

वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों में अभिव्यक्त आर्थिक बोध

शिवाली शर्मा
पीएचडी शोधार्थी, हिंदी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू और कश्मीर, भारत

सारांश
आज़ादी के बाद हमारा देश (भारत) आर्थिक उन्नती की ओर अग्रसर हुआ परन्तु इसी उन्नती के भीतर आर्थिक उदारवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति तथा भूमंडलीकरण जैसा अदृश्य मायाजाल छिपा हुआ है। हिंदी ग़ज़ल समसामयिक जीवन तथा सामाजिक जनचेतना से जुड़ी हुई ग़ज़ल है। समकालीन हिंदी ग़ज़ल में ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप ने देश के भीतर शोषण का शिकार हो रहे किसानों, श्रम का शोषण, भूख, अभाव, मज़दूरों और बेरोज़गार युवा की दबी हुई आवाज़ को विद्रोह रूप में सामने लाया है। बाज़ार का सबसे पहला शिकार विकासशील देश बन रहे हैं। पूँजीवाद, बाज़ारवाद, वैश्वीकरण आदि ऐसे अदृश्य दुश्मन हैं जो विकास करने वाले देशों को अन्दर ही अन्दर खोखला करने का प्रयास कर रहे हैं। उदारवाद की नीति के भीतर दास बनाने का षड्यंत्र रचा जा रहा है। वशिष्ठ जी ने अदृश्य दुश्मन पर कटाक्ष किया है।

मूलशब्दः किसान, मज़दूर, पूँजीवाद, बाज़ारवाद, बेरोज़गारी, अभाव

प्रस्तावना

समकालीन हिंदी ग़ज़ल समसामयिक जीवन तथा सामाजिक जनचेतना से जुड़ी हुई ग़ज़ल है। समकालीन हिंदी ग़ज़ल में ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं। इन के पांच ग़ज़ल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इन की ग़ज़लों की विशेषता यह है कि इन्होंने सामाजिक विसंगतियों के कारण फैली निराशा तथा उदासी को चित्रित करते हुए शोषित वर्ग के भीतर चेतना जागृत कर समाज में फैले आराजक तत्वों का प्रतिरोध किया है । आज़ादी के बाद हमारा देश (भारत) आर्थिक उन्नती की ओर अग्रसर हुआ परन्तु इसी उन्नती के भीतर आर्थिक उदारवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति तथा भूमंडलीकरण जैसा अदृश्य मायाजाल छिपा हुआ है। वशिष्ठ अनूप की ग़ज़लों में किसानों का शोषण, निर्धन वर्ग की पीड़ा, बेरोज़गारी, बाल मज़दूरी आदि विषयों को गहराई से रेखांकित किया है।

अर्थ द्वारा मनुष्य अपनी और अपने परिवार की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करता है। पूँजी ने समाज को तीन वर्गों में बांट दिया है– उच्च वर्ग, मध्यवर्ग और निम्न वर्ग। उच्च वर्ग और निम्न वर्ग तो आरम्भ से समाज में रहे हैं परन्तु समय के साथ–साथ अर्थ के आधार पर एक नए वर्ग का उदय हुआ जिसे मध्यवर्ग कहा गया। मध्यवर्ग और निम्न वर्ग को अपना जीवन चलाने के लिए प्रतिदिन कठिन परिश्रम करना पड़ता है। अमीर और गरीब के जीवन के विरोधाभास दिखाते हुए वशिष्ठ जी का शे'र है:

''दूध की बहती हैं नदियाँ आप के संसार में
पर नहीं मिलती है रोटी–भात मेरे देश में।''[1]

गरीब की दशा इतनी कारुणिक हो गयी है कि अब रोटी भी उसके भावों के साथ छल कर रही है। वह तसव्वुर में तो आती है किन्तु हक़ीक़त में उसके भाग्य में भूख की तड़प है जिसके कारण वह दिन–रात छटपटाता है। गरीब की इस दशा को देखकर वशिष्ठ जी लिखते हैं :

''रोटियाँ आती है सपनों में मेरी थाली में,
और छिप जाती हैं जब ख्वाब टूट जाता हैं।''[2]

पूरा देश गरीबों की मेहनत पर टिका है पर गरीबों की ज़िंदगी में ही कोई स्थिरता नहीं है। वह दिन भर मेहनत करता है परन्तु रात को उसके हाथ केवल निराशा आती है। एक ओर देश के मेहनतकश लोग हैं जो अपनी हाड़–माँस भी गला देते हैं और अभावों में जीते हैं। तो दूसरी तरफ उन्हीं का खून चूसकर अमीर लोग गाड़ियाँ और महलों में आराम से रहते हैं :

''फटे कपड़े हैं, खाली जेब, टूटे दिल, बुझी आँखें,
यही इस मुल्क के हर गाँव हर घर की कहानी है।
कोई जी तोड़ मेहनत करके भी भूखा तड़पता है,
किसी की कार है, बंगला है, नौकर नौकरानी है।''[3]

गरीब लोगों की विडम्बना यह है कि वह गरीबी को भाग्यविधाता की रचना मानते हैं जबकि असलियत यह है कि उसे उसकी मेहनत का सही मूल्य नहीं दिया जाता। सर्वहारा को कम मूल्य देकर अमीर और गरीब की खाई को बनाए रखने की साज़िश रची जाती है

''सच है कि गरीबों का सदा छीना गया हक,
वे कह रहे हैं उनको मुकदर नहीं मिला।''[4]

निम्न वर्ग को उसके हक से वंचित रखकर उसका शोषण किया जाता है। आम जनता ने देश (भारत) की आज़ादी के बाद अपने जीवन के सुनहरे सपने देखे थे, जहाँ वह शोषण मुक्त होकर अपना जीवन व्यतीत करेगी। परन्तु आज़ादी के बहत्तर साल के बाद भी खुशहाली का सपना केवल सपना रह गया। वह न तो शोषण मुक्त हुआ और न उसके जीवन में खुशहाली का दौर आया:

''ये कैसा हाल है इस मुल्क में आज़ादी का,
ग़रीब जो था जो अब भी ग़रीब है यारो।''[5]

हमें ऐसी आज़ादी मिली जिसे प्रत्यक्ष रूप से देखें तो स्वतंत्र हैं परन्तु कहीं न कहीं आज भी अप्रत्यक्ष रूप से गरीब गुलामी का ही जीवन जी रहा है। मेहनतकश लोगों की पारिवारिक स्थिति का चित्रण करते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं :

''बच्चे खुश हैं पापा आये, पत्नी गुमसुम देख रही है।
भारी मन सोचे मज़दूर क्या कहकर समझाये वह।''[6]

इससे बड़ा दर्द क्या होगा कि मज़दूर अपने ही बच्चों की खुशियों के लिए तरसता है। वह अपनी उदासी और बच्चों की खुशी के बीच पिसता है। वह जी–तोड़ मेहनत तो करता है परन्तु अपने बच्चों की खुशियां नहीं खरीद पाता। वशिष्ठ जी मज़दूरों के साथ अन्याय करने वालों का विरोध करते हुए लिखते हैं :

''मेहनतकशों को भेड़–बकरियाँ न समझना,
टूटेंगे एक दिन वे तुम्हारे जहान पर।''[7]

वह अत्याचार करने वाले लोगों को ललकारते हुए कहते हैं कि मेहनत करने वाले लोग जिस दिन अँगारे बनेंगे वह अत्याचारी को जलाकर राख कर देंगे। श्रमिक की अहमयित पर प्रकाश डालते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं

''महलों के ऐशबाग में महके हैं जो भी फूल,
उनकी महक अवाम के जीवन पे टिकी है।
ये कोठियाँ जो ब्याह की दुल्हन सी सजी हैं,
उनकी चमक गरीब के आँगन पे टिकी है।''[8]

गगनचुम्बी इमारतों की रौनक का कारण मज़दूर ही है। वह इस बात को स्पष्ट रूप में स्वीकार्य मानते हैं कि कोठियों का अपने पर इतराना फजूल है क्योंकि उनका निर्माण मज़दूर के खून–पसीने से हुआ है। उसके श्रेय को नकारना बहुत बड़ी भूल है।
भारत सीधे रूप में अपने विकास के लिए खेती–किसान से संबंध रखता है। किसान की उन्नति में ही देश की उन्नति निर्भर है। खेत के छोटे से टुकड़े में फसलें उगाकर किसान सारे देश का पेट तो भरता है परन्तु उसे स्वयं खाली पेट रहना पड़ता है। बिचौलिये, बाज़ार, परिवहन, विज्ञापन आदि उसे लूटते हैं। महँगाई की मार उसकी कमर तोड़ देती है। वह अपना पेट पाले या बाज़ार को देखे इस प्रश्न की चोट वह रोज़ सहता है। किसान की मेहनत का असली मूल्य किसे मिलना चाहिए निम्न शेर द्वारा बताते हैं

''फसल हो उसकी जो बोये खेत में खुशहालियाँ
कन्धों पर है दुनिया उनके सरपर ताज हो।''[9]

हमारे घरों में अन्न के भण्डार का भरे रहने का कारण किसान है। उनके त्याग के कारण ही हमारा जीवन चलता है। वह धूप, ठंड और बारिश में डटा रहकर अपनी दृढ़ साधना द्वारा हमारा पेट पालता है, इसलिए खुशी के सही हकदार किसान हैं। वह अपने श्रम द्वारा माटी को सोना बनाते हैं। आधुनिकता के कारण खेती की जगह अब औद्योगिक वस्तुओं को बढ़ावा दिया जा रहा है। जिस कारण किसान हतोत्साहित हो रहा है। नतीजतन वह खेती का पेशा छोड़ अब मज़दूरी करने के लिए बेबस हो गया है

''इतनी मेहनत है, झमेले हैं, दर्द है इतना,
किसान भागने लगे हैं अब किसानी से।''[10]

किसान और खेती हमारी संस्कृति के अंग हैं और आज इनकी इतनी दुर्बल दशा है कि किसान किसानी छोड़ने के लिए मजबूर हो गया है।
जीवन जीने के लिए रोटी, कपड़ा और मकान ज़रूरी है। इन सबकी पूर्ति के लिए रोज़गार का होना आवश्यक है। आज युवा पीढ़ी के सामने सबसे बड़ा प्रश्न रोज़गार का है। वह काबिल होकर भी दर–दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर है। काबिलियत के चिथड़े उड़ते देख वशिष्ठ जी आक्रोश व्यक्त करते हुए लिखते हैं

''बड़े सदमें में है तहज़ीब अपनी
हुनर लाचार होता जा रहा है।''[11]

प्रतिभा खुद को ठगा महसूस कर रही है। युवा प्रतिस्पर्धा की दौड़ में स्वयं को पिछड़ा महसूस कर डिप्रेशन का शिकार हो रहा है। बेरोज़गारी युवा वर्ग के जीवन की एक विकराल समस्या है तथा दूसरी समस्या उसका निर्धन होना भी है। गरीब आत्मसम्मान से अपना जीवन व्यतीत करना चाहता है। उसके पास कोई सिफारिश नहीं होती परिणाम यह कि

''मिलता है रिजर्वेशन मंत्री के लाडले को,
वह हाथ मल रहा जो सचमुच गरीब है।''[12]

सिफारिशों के भोज में प्रतिभा तिलमिलाते हुए दम तोड़ती महसूस कर रही है। सरकार द्वारा निर्धारित आरक्षण के आधार पर जिसे आगे बढ़ने का अवसर प्राप्त होना चाहिए वह आज भी हाशिए पर खड़ा होकर अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है। धन, पद आदि के आधार पर शिक्षा के क्षेत्र में भी राजनीतिक खेल खेला जा रहा है।
रोज़गार, भुखमरी, बेरोज़गारी आदि ज्वलंत समस्याओं को नेपथ्य में धकेल दिया जाता है। केवल निर्थक मुद्दों पर बेहिसाब बेहस की जाती है। सरकार पर तंज़ करते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं :

''संसद रोज़गार के अवसर ढूंढ रही
भिक्षाटन का पाठ पढ़ाया जायेगा''[13]

सरकार भविष्य के स्तम्भ को नाटकीय स्थिति में धकेल रही है। युवा की स्थिति बदत्तर होती जा रही है। युवा वर्ग अपनी उम्र का अधिकांश हिस्सा शिक्षा ग्रहण करने में लगा देता है। शिक्षोपरान्त योग्य होने पर भी जब उसे उसकी योग्यतानुसार नौकरी नहीं मिलती तो उसके भीतर कुण्ठा उत्पन्न होती है। कुण्ठा का परिणाम कभी–कभी इतना भयानक भी निकलता है कि वह अपने जीवन का अंत कर लेने की सोचता है।
गरीबी और भूख का परिणाम यह है कि जिन हाथों में देश का भविष्य बनाने के लिए कलम–कॉपी होना चाहिए था, उनके हाथों में मज़दूरी के छाले हैं। वह हाथ श्रम करने के लिए विवश हैं। यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि बच्चों को अपना पेट पालने के लिए बालश्रम का शिकार होना पड़ता है। धन का अभाव उनके जीवन जीने का अभाव बन जाता है। बाल मज़दूरी की दशा को दर्शाते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं :

''होटलों की प्लेट में तकदीर अपनी खोजता,
बेवजह पिटता हुआ मनहूस–सा बचपन मिला।''[14]

हमारे देश का भविष्य बालश्रम की जंजीरों में जकड़ा हुआ है। बालश्रम मानवीय धरातल पर तथा सरकारी तौर पर अपराध ही है।
इस रोग के उपचार के बिना देश सफल नहीं हो सकता है।
विकसित तथा विकासशील देश तो एक ओर तरक्की की बड़ी–बड़ी बातें करते हैं परन्तु वह बालश्रम के आंकड़ों से इन्कार नहीं कर सकते जोकि तरक्की का दुखद पहलू है।
बाज़ारवाद के हस्तक्षेप से मानव जीवन के समक्ष अनेक कठिनाईयाँ उत्पन्न हो गई हैं परन्तु वह बाज़ारवाद की कुरूपता को देखना ही नहीं चाहता। बाज़ार का सबसे पहला शिकार विकासशील देश बन रहे हैं। पूँजीवाद, बाज़ारवाद, वैश्वीकरण आदि ऐसे अदृश्य दुश्मन हैं जो विकास करने वाले देशों को अन्दर ही अन्दर खोखला करने का प्रयास कर रहे हैं। उदारवाद की नीति के भीतर दास बनाने का षड्यंत्र रचा जा रहा है। वशिष्ठ जी अदृश्य दुश्मन पर कटाक्ष करते हुए लिखते हैं :

''लुटेरों की दुनिया के सरदार हैं वो,
हमारी हँसी के खरीदार हैं वो।
अमन के पुजारी उन्हें मत समझना
चले बेचने अपने हथियार हैं वो।''[15]

रचनाकार ने अमरीका जैसे विकसित देश की रणनीति का पर्दाफाश किया है जोकि अमन का मुखौटा पहन कर विश्व पर कब्ज़ा करने की मानसिकता रखता है।
भूमंडलीकरण के इस युग में विश्व एक बहुत बडे बाज़ार में परिवर्तित होता जा रहा है। बाज़ारवाद का प्रभाव मनुष्य के हर क्षेत्र में पड़ा है। इसने हमारे मन–मस्तिष्क पर इतना गहरा प्रभाव डाला है कि हम नकली और असली की पहचान भूला बैठे हैं। इसका मुख्य लक्ष्य नफाखोरी, आम आदमी का शोषण, संस्कृति का हरण और भाषा पर प्रहार करना है। इसके विकराल रूप से बचने की सलाह देते हुए वशिष्ठ जी लिखते हैं :

''भूमण्डलीकरण व विश्वग्राम जैसे शब्द,
सोने के चमकते हुए खंजर की तरह हैं।''[16]

पूरा विश्व सिमट कर ग्राम बन गया है परन्तु यह ग्राम मनुष्य के लिए भयानक है। दिखने में तो यह सुंदर तथा आकर्षक लगता है परन्तु इसके नतीजे बहुत ही ख़तरनाक हैं। इनका मक़सद केवल विकासशील देश की अर्थव्यवस्था पर कब्ज़ा करना है जिसका मोहरा यह वहां की जनता को लुभावने अवसर देकर बना रहे हैं। देखा–देखी का असर हमारी मानसिकता पर भी पड़ रहा है। किसी भी नई वस्तु के अभाव के कारण हम हीन भावना का शिकार हो रहे हैं। यह खेल केवल अर्थ का नहीं है बल्कि मानसिक रूप से गुलाम होने और बनाने का भी है।
बाज़ार हमारी पुरानी स्वस्थ परम्पराओं को भी छिन–बिन कर रहा है। बाज़ार का शिकार हर वर्ग का व्यक्ति है। आने वाली नसल में भी यह नशे की तरह उनकी नसों में रोंपा जा रहा है। भविष्य में आने वाली पीढ़ी को इसका शिकार इस प्रकार बनाया जा रहा है कि वह चाहकर भी इसके प्रभाव से बच नहीं सकते। बच्चे जिन्हें बचपन में दूध, मक्खन आदि का शौक होना चाहिए था, किस प्रकार वह विदेशी कंपनियों द्वारा बनाए गई पेप्सी, मिरिंडा आदि का शिकार होते जा रहे हैं, इस पर लेखक का शेर है :

''यशोदा देखकर पेप्सी–मिरिंडा नन्द से बोलीं,
बड़ी मुश्किल है अब कान्हाँ को माखन दे नहीं सकते।''[17]

माखन की जगह कोल्ड ड्रिंक्स का बच्चों के हाथ में होना उनके लिए ज़हर की मानिंद है। अल्पआयु में उनका शरीर बिमारियों का घर बन रहा है। यह बच्चे नहीं बल्कि देश की रीढ़ की हड्डी हैं जिसे कमज़ोर तथा बाज़ार पर निर्भर बनाये रखने का ओछा खेला जा रहा है। इस षड्यंत्रकारी चाल को देखकर वशिष्ठ जी लिखते हैं:

''इक ऐसे दौर में जब नींद बहुत मुश्किल है,
अजीब शख्स है ख़्वाबों की बात करता है।''[18]

पूंजीवाद, भूमण्डलीकरण, बाज़ारवाद आदि ऐसे प्रत्यक्ष शत्रु नहीं हैं जिनसे युद्ध किया जाए बल्कि अप्रत्यक्ष रूप से हम पर हावी होने का प्रयत्न कर रहे हैं। एक बार यह हम पर हावी हो गए तो इनकी गिरफ्त से निकलना बहुत मुश्किल हो जाएगा क्योंकि यह हमें वैचारिक रूप से द्ररिद्र बनाना चाहता है। भूमण्डलीकरण के दौर में उदारीकरण के भीतर चलने वाले षड्यंत्र पर रचनाकार आगाह करते हुए लिखते हैं :

''बारी–बारी सबको खाता जाएगा,
धीरे–धीरे मुँह फैलाता जाएगा।
भरी नदी का झाँसा पहले देगा फिर,
बगुला सबको पार लगाता जाएगा।''[19]

कब हम धीरे–धीरे बाज़ारवाद के पूरी तरह से अधीन हो जाएंगे हमें स्वयं को खबर तक नहीं होगी। यह सारा उपक्रम मृगतृष्णा की भांति है जो दिखता है, वह है नहीं इसलिए ऐसे शिकारी से सतर्क रहने की आवश्यकता है। इच्छाओं की पूर्ति के मोहजाल ने हमें इस प्रकार जकड़ रखा है कि हम बाज़ारवाद जैसे जाल को पहचानने में असमर्थ हो रहे हैं। भूमण्डलीकरण के कारण दूर से एकसूत्र में बंधा समाज भीतर से बिखरा हुआ है।

निष्कर्ष

हम कह सकते हैं कि ग़ज़लकार वशिष्ठ अनूप ने जहाँ एक ओर अर्थ के आधार पर देश के भीतर शोषण का शिकार हो रहे किसानों, श्रम का शोषण, भूख, अभाव, मज़दूरों और बेरोज़गार युवा की दबी हुई आवाज़ को विद्रोह रूप में सामने लाया है वहीं दूसरी ओर बाज़ारवाद, पूंजीवाद, भूमंडलीकरण आदि विदेशी षड्यंत्रकारी नीतियों का पर्दाफाश भी किया है।

संदर्भ सूची

1. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 45
2. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 52
3. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 57
4. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 68
5. वशिष्ठ अनूप, तेरी आँखें बहुत बोलती हैं, पृ. 86
6. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 20
7. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 23
8. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 6
9. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 48
10. वशिष्ठ अनूप, तेरी आँखे बहुत बोलती हैं, पृ. 41
11. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 11
12. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 42
13. वशिष्ठ अनूप, रोशनी खतरे में है, पृ. 29
14. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 18
15. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 14
16. वशिष्ठ अनूप, मशालें फिर जलाने का समय है, पृ. 79
17. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 93
18. वशिष्ठ अनूप, बंजारे नयन, पृ. 3
19. वशिष्ठ अनूप, रोशनी की कोपलें, पृ. 19